The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research
An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 2 | Issue 11 | November 2024
ISSN: 2583-973X (Online)
Website: www.theacademic.in

भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में महिलाओं की सहभागिता

आकाश दीप
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, मेरठ कॉलिज, मेरठ
deepakash214@gmail.com

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Keywords:
समाज, पंचायतराज व्यवस्था, राजनीति सहभागिता, महिला, भेदभाव।

DOI:
10.5281/zenodo.14294885

ABSTRACT

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्रा देवता"[1] भारतीय संस्कृति में नारी सदा ही शक्ति का प्रतीक मानी जाती रही है। हमारे ऋषियों की मान्यता थी कि जहाँ नारी को समुचित सम्मान मिलता है, वहाँ देवी–देवता निवास करते हैं। वैदिक काल की दृष्टिकाएं हो, चाहे बीसवीं सदी या इक्कीसवीं सदी की क्रान्तिकारी महिलाएँ, ये नारी शक्ति के विभिन्न रूप हैं। वर्तमान में लोकतंत्र शासन प्रणाली का श्रेष्ठतम उदाहरण है। इसका सार जनता की सहभागिता में निहित है। यह लोकतंत्र महिला एवं पुरूष दोनों को उन्नति और विकास के समान अवसर प्रदान करता है। परन्तु विकास के विविध चरणों में महिलाओं को उचित स्थान प्राप्त नहीं हुआ है, जिसकी वह हकदार है। अतः स्पष्ट है कि महिलाओं को राजनीतिक जीवन का पूर्णतः ज्ञान और अनुभव तब ही होगा जब उन्हें आगे बढ़ने का अवसर दिया जायेगा। क्योंकि जब भी उन्हें अवसर दिया गया है तब उन्होंने अवसर मिलने पर अपनी दक्षता का परिचय भी दिय है और समाज में अपनी भूमिका का पूर्ण दृढ़ता के साथ निर्वाह किया लेकिन भारतीय समाज ने ही महिलाओं के हितों को अनदेखा किया है। इसलिए यह आवश्यक है कि संसद में महिलाओं का न्यायपूर्ण प्रतिनिधित्व होना चाहिए। राजनीति में महिलाओं की सक्रियता ही महिला उत्थान की दिशा में महत्वपूर्ण कदम साबित हो सकता है। ये प्रयास महिला उत्थान के लिए ये प्रयास मात्र कानून बना देने से ही सफल नहीं हो सकते इन्हें सफल बनाने के लिए गम्भीर प्रयास करने की आवश्यकता है। अतः महिलाओं को भी स्वयं जागरूक एवं एकजुट होने से अपने अधिकारों की प्राप्ति होगी। अतः महिलाओं को दृढ़ संकल्प के साथ

समस्याओं का हल निकालना होगा। अतः कहा जा सकता है कि लोकतंत्र का अभिप्राय ऐसी शासन व्यवस्था से होता है जिसका निर्माण जनता की भागीदारी से होता है। लोकतंत्र का आधार स्वतंत्रता और समानता है। महिलाएँ समाज का अभिन्न हिस्सा है। अतः महिलाओं की राजनीति में भागीदारी सुनिश्चित होना आवश्यक है। महिलाओं की राजनीति में भागीदारी उन्हें उचित और पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिए बिना नहीं हो सकती। साथ ही महिलाओं को शिक्षित बनाना और उनमें राजनीतिक चेतना का विकास करना भी आवश्यक है। नोबेल पुरस्कार से सम्मानित प्रो0 अमर्त्य सेन ने कहा है कि ''यदि वंचित वर्ग को अधिकार मिल जाएँ तो उनमें योग्यता स्वतः ही उत्पन्न हो जाती है और उस वर्ग का आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक व राजनीतिक विकास भी स्वतः हो जाता है।''[2] यदि प्रो0 अमर्त्य सेन के विचारों को अपनाया जाए तो महिलाओं का सर्वांगीण विकास किया जा सकता है।

भूमिका–

आज से लगभग ढाई हजार वर्ष पूर्व प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक **प्लेटो** ने कहा था कि ''महिलाओं की शक्ति चौके–चूल्हे में नष्ट हो जाती है, उनमें घर के समतुल्य शासन करने की क्षमता होती है।''[3] प्लेटों के इस विचार से यह बात स्पष्ट होती है कि प्लोटो ने महिलाओं के राजनीति में प्रवेश को उचित ही नहीं, अपितु अनिवार्य भी माना है।

स्त्री का मानव की सृष्टि में ही नहीं वरन् समाज निर्माण में भी महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि स्त्री और पुरूष मिलकर परिवार का निर्माण करते हैं। अनेक परिवारों से समुदाय और अनेक समुदायों से मिलकर समाज निर्मित होता है। यदि हम विश्व इतिहास पर दृष्टि डालें तो यह पता चलता है कि संस्कृति की नींव डालने का श्रेय सर्वप्रथम स्त्री को ही दिया जाता है। **रैडन** के अनुसार– ''स्त्रियों ने सर्वप्रथम संस्कृति की नींव डाली तथा मानव को इधर–उधर भटकने से बचाया।''[4] किसी समाज की प्रगति व उन्नति का अनुमान उस समाज में स्त्री को दिए गए सम्मान द्वारा लगाया जा सकता है।

विभिन्न कालों में हिन्दू समाज में स्त्रियों की स्थिति

वैदिक काल– वैदिक में भारतीय समाज में नारियों की स्थिति उन्नत थी। नारी को समाज और परिवार में महत्त्वपूर्ण

स्थान प्राप्त था। नारी को अर्द्धांगिनी कहा जाता था। **अथर्ववेद** में वर्णन है कि ''नववधू तू जिस घर में जा रही है वहाँ की तू साम्राज्ञी है। तेरे ससुर, सास, देवर व अन्य तुझे साम्राज्ञी समझते हुए तेरे शासन में आनन्दित हैं।''[5]

उत्तर–वैदिक काल– उत्तर वैदिक काल जो 600 ई0 पूर्व से 300 ई0 तक माना गया है। इस काल में नारियों के स्तर में कुछ गिरावट आयी। उत्तर–वैदिक काल में पति को परमेश्वर मानने की भावना का बीजारोपण हुआ।

धर्मशास्त्र काल– इसे तीसरी शताब्दी से 11वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक माना गया है। इस काल में नारियों की स्थिति में और गिरावट आयी। इस काल में मनुस्मृति को व्यवहार की कसौटी मानकर वैदिक नियमों को तिलांजलि दे दी गयी। इस काल में नारियाँ सामाजिक और धार्मिक संकीर्ण विचारधारा की शिकार हुईं। **मनुस्मृति** में तो यहां तक लिख दिया गया कि ''नारी कभी स्वतंत्र रहने योग्य नहीं है, बचपन में पिता के अधिकार में, युवावस्था में पति के वंश में तथा वृद्धावस्था में पुत्र के नियन्त्रण में रहे।''[6]

मध्यकालीन काल– मध्यकाल 11वीं शताब्दी से 16वीं शताब्दी तक माना जाता है। इस काल में मुगल साम्राज्य की स्थापना हुई। भारतीय संस्कृति की मुगलों से रक्षा करने के लिए ब्राह्मणों ने कड़े नियमों का प्रावधन किया। बाल–विवाह होने लगे, जिससे स्त्रियों की शिक्षा में गिरावट आयी एवं पर्दा प्रथा का भी चलन शुरू हो गया।

ब्रिटिश काल– ब्रिटिश शासन काल में पाश्चात्य शिक्षा एवं कुछ समाज सुधारकों के प्रयासों के परिणामस्वरूप महिलाओं की स्थिति में कुछ सुधार की आस जगी। सन् 1869 में कन्या वधन पर प्रतिबंध लगाया गया। राजा राममोहन राय ने पर्दा प्रथा, सती प्रथा और बाल विवाह के विरूद्ध तथा ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने विधवा पुनर्विवाह एवं महिला शिक्षा के प्रति आवाज उठाई एवं डॉ0 भीमराव अम्बेडकर ने महिलाओं को राजनीतिक व सामाजिक अधिकार से सम्पन्न बनाने की दिशा में सराहनीय कार्य किया, परन्तु ये सभी प्रयास लम्बे समय से दमित महिला उन्नयन के लिए पर्याप्त नहीं थे।

आधुनिक युग– आधुनिक युग में भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति के अध्ययन के दो बिन्दु हैं–

(क) स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व तक– इस काल में भारतीय स्त्रियों की स्थिति में सुधार के लिए कुछ प्रयास अवश्य किए गए, परन्तु ब्रिटिश सरकार की तरफ से इस दिशा में कोई विशेष कदम नहीं उठाए गए और उसका परिणाम यह हुआ कि 20वीं शताब्दी तक स्त्रियों की स्थिति में किसी प्रकार का संतोषजनक सुधार नहीं हुआ। **अरस्तु** का कहना है कि ''नारी की उन्नति या अवनति पर ही राष्ट्र की उन्नति या अवनति निर्धारित है''[7] एवं **स्वामी विवेकानन्द** ने कहा है कि ''जब तक महिलाओं की स्थिति में सुधार नहीं होगा तब तक विश्व का कल्याण नहीं हो सकता। किसी भी पक्षी के लिए एक पंख से उड़ना असंभव है।''[8]

(ख) स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद स्त्रियों की स्थिति– स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद स्त्रियों की स्थिति में काफी सुधार हुआ है। संविधान के कुछ अनुच्छेदों में स्त्रियों को सभी क्षेत्रों में पुरूषों के समान अधिकार दिए गए हैं। इनके बदलते स्वरूप

को बताते हुए **शंभूरत्न त्रिपाठी** ने लिखा है कि ''वर्तमान का यह यथार्थ विवेचन भविष्य के लिए संकेत देता है कि भारत की भावी हिन्दू नारी अपनी सामाजिक बुराईयों से मुक्त होगी। वह अपना उत्तरोत्तर मानसिक विकास करेगी। पुरूषों के समान संसार के विविध क्षेत्रों में कार्य करेगी। आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर होगी, पुरूषों की दासी नहीं रहेगी और अबला से सबला बनेगी।''[9]

प्राचीन काल से अर्वाचीन काल तक महिलाओं की सम्पूर्ण दशा पर दृष्टिपात करने से यह दृष्टिगोचर होता है कि महिलाएँ प्रत्येक काल में न्यूनाधिक दमन, शोषण एवं उपेक्षा का शिकार रही हैं। यद्यपि समाज की महिलाओं से काफी अपेक्षाएँ रही हैं, फिर भी ये सदा उपेक्षाएँ ही झेलती रही हैं। सृष्टि के उद्भव काल से ही मानव सभ्यता, सत्ता एवं स्वतंत्रता की मानसिकता के चक्रव्यूह में चकराती रही है। मानव सभ्यता की इस प्रवृत्ति का सबसे अधिक खामियाजा महिलाओं को ही झेलना पड़ा है। दुनिया की लगभग आधी आबादी महिलाओं की रही है, परन्तु दुनिया की क्रियाशीलता में महिलाओं सहभागिता भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में आधी की आधी भी नहीं रही है।

महिला आरक्षण की आवश्यकता

हमारे देश में राजनीतिक और सामाजिक व्यवस्थाओं के बीच दोहरापन स्पष्ट दिखाई देता हैं एक ओर जहाँ राजनीतिक व्यवस्था सभी नागरिकों के बीच समानता, सभी को अभिव्यक्ति के अधिकार और कर्म की स्वतन्त्रता पर टिकी है, वहीं दूसरी ओर हमारी सामाजिक व्यवस्था असमानता, अभिव्यक्ति के अधिकार के दमन ओर जातिगत ऊँच–नीच पर टिकी है। इसके अतिरिक्त इसका सबसे बड़ा लोकतंत्र विरोधी लक्षण यह है कि यह आज भी पुरूष प्रभुत्व पर आधारित है और अपनी आधी–आधी आबादी यानी महिलाओं को निर्णय करने की प्रक्रिया से बाहर रखना चाहता है। असल में गंभीर मुद्दा यह है कि जो समाज स्त्री के अस्तित्व को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं, वह उसके व्यक्तित्व को स्वीकार कैसे करेगा, वह उसे जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अपनी स्वतन्त्र भूमिका निभाने की आजादी कैसे देगा। इन्हीं कारणों के रहते विभिन्न संवैधानिक और कानूनी प्रावधानों के बावजूद आजादी के बाद से आज तक विधायिका और नीति निर्धारित करने वाले अन्य निकायों में महिलाओं को उनके अनुपात के अनुरूप पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं मिला। वास्तव में, लोकतान्त्रिक परम्पराओं को बढ़ावा देने तथा अन्याय और दमन के खिलाफ संघर्ष के लिए निर्णय–निर्माण प्रक्रिया में महिलाओं की उपस्थिति अनिवार्य है।

जब तक महिलाओं को सीधे निर्णय–निर्माण के स्तर पर शामिल नहीं किया जाएगा, तब तक महिलाओं से जुड़े गम्भीर मसलों पर बहुत गम्भीरता से ध्यान नहीं दिया जाएगा। इसके अलावा लोकतन्त्र सिर्फ यही मांग नहीं करता कि उनके हितों का ध्यान रखा जाए, जिन्होंने चुनाव में समर्थन किया है, बल्कि लोकतन्त्र का निहित मूल्य यह है कि सभी समूहों के हितों को प्रतिनिधित्व मिले। लोकतन्त्र की यह बुनियादी आवश्यकता है कि सभी नागरिकों को सार्वजनिक फैसलों में भागीदारी करने के अधिकार को मान्यता मिले।

भारतीय राजनीत और अभिशासन से देश की आधी जनसंख्या अर्थात महिलाओं को बाहर रखा गया है।

राजनीति में सक्रिय भूमिका निभाने वाली महिलाओं की संख्या बहुत ही कम है। यदि संसद, विधानसभाओं और मंत्रिपरिषद में महिलाओं की कुल उपस्थिति को मिलाकर इसका औसत प्रतिशत निकाला जाये तो यह लगभग 13 या 14 प्रतिशत है। निश्चित रूप से निर्णय–निर्माण में महिलाओं को और अधिक प्रभावकारी भूमिका देने की जरूरत है। समान नागरिकता और अधिकारों के लोकतान्त्रिक और संवैधानिक आश्वासनों को लागू करने में आने वाली बाधाओं को देखते हुए, महिलाओं की भूमिका को बढ़ाने की अधिक जरूरत महसूस होती है। महिलाओं के सच्ची समानता हासिल करने के लिए यह जरूरी है कि महिलाएँ, पुरूषों के साथ समान स्तर पर सत्ता में सहभागिता करें। अतः महिलाओं की राजनीतिक क्षेत्र में सहभागिता बढ़ाने का एक माध्यम आरक्षण हो सकता है।

महिला आरक्षण का उद्देश्य

अगर राजनीतिक व्यवस्था में विभिन्न समूहों का आनुपातिक प्रतिनिधित्व नहीं होता, तो नीति निर्माण को प्रभावित करने की उनकी क्षमता सीमित होती है। महिलाओं के साथ होने वाले सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर केन्द्रित समझौते (कन्वैशन) में प्रावधान है कि राजनीतिक और सार्वजनिक जीवन में महिलाओं के साथ होने वाले भेदभाव का उन्मूलन किया जाना चाहिए। भले ही भारत ने उस कर्न्वेशन पर दस्तखत किए हैं, लेकिन निर्णय लेने वाले निकायों में महिला प्रतिनिधित्व के मामले में भेदभाव जारी है। महिला सांसदों की संख्या पहली लोकसभा में 5 प्रतिशत से बढ़कर 18वीं लोकसभा में 13 प्रतिशत हो गयी है। 18वीं लोकसभा के लिए कुल 74 महिला सदस्य (13. 62 प्रतिशत) जीतकर आई हैं जो 2019 की 78 महिला सदस्यों (14 प्रतिशत) के मुकाबले थोड़ी कम हैं। सबसे ज्यादा 11 महिला सदस्य बंगाल से चुनकर आई हैं तथा लोकसभा चुनावों में 797 महिला प्रत्याशी मैदान में थीं। इनमें से भाजपा ने सर्वाधिक 69 और कांग्रेस ने 41 महिलाओं को प्रत्याशी बनाया था। लेकिन संख्या अब भी काफी कम है। पंचायतों में महिला आरक्षण के प्रभावों पर 2003 के एक अध्ययन से पता चलता है कि आरक्षण के तहत चुनी गई महिलाएं महिला कल्याण के अधिक कार्य करती हैं कार्मिक, लोक शिकायत, कानून और न्याय संबंधी स्टैंडिंग कमेटी (2009) ने कहा था कि स्थानीय निकायों में महिलाओं के लिए सीटों के आरक्षण ने उन्हें सार्थक योगदान देने में सक्षम बनाया है। उसने यह भी कहा था कि इस बात की चिंता जताई गई थी कि स्थानीय निकायों में महिलाएं पुरूषों की प्रॉक्सी बनेंगी, यानि उनकी जगह पुरूष ही कार्य करेंगे। लेकिन यह चिंता भी निराधार साबित हुई। अन्तर–संसदीय संघ (2022) ने कहा है कि विधायी कोटा महिलाओं के प्रतिनिधित्व में एक निर्णायक कारक रहा है। आरक्षण की नीति का विरोध करने वालों का तर्क है कि महिलाओं के लिए अलग निर्वाचन क्षेत्र न केवल उनके दृष्टिकोण को संकीर्ण करेंगे, बल्कि उनकी गैर बराबर स्थिति को कायम रखेंगे। क्योंकि यह माना जाएगा कि वे योग्यता के आधार पर प्रतिस्पर्धा नहीं कर रहीं। उदाहरण के लिए संविधान सभा में **रेणुका रे** ने महिलाओं के लिए सीटें आरक्षित करने के खिलाफ तर्क दिया ''जब महिलाओं के लिए सीटों का आरक्षण होता है कि सामान्य सीटों के लिए उन पर आमतौर पर विचार ही नहीं किया जाता, चाहे वे कितनी भी काबिल क्यों न हों। हमारा मानना है कि अगर सिर्फ क्षमता पर ध्यान दिया जाए तो महिलाओं को अधिक मौके मिलेंगे।''[10] विरोधियों का यह तर्क है कि

आरक्षण से महिलाओं का राजनैतिक सशक्तिकरण नहीं होता, क्योंकि चुनावी सुधार के बड़े मुद्दों जैसे राजनीति का अपराधीकरण, राजनीतिक दलों में आंतरिक लोकतंत्र और कालेधन के प्रभाव को रोकने के उपायों पर ध्यान नहीं दिया जाता है।

स्थानीय स्वशासन और महिलाएँ

भारत की आत्मा गाँवों में बसती है क्योंकि इसकी दो–तिहाई आबादी गाँवों में निवास करती है। अतः स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से ही ग्रामीण विकास को नियोजन में प्राथमिकता दी गई तथा ग्रामीणों की शासन व्यवस्था में भागीदारी को सुनिश्चित करने हेतु पंचायती राज व्यवस्था लागू की गई। यद्यपि 1956 से लेकर 1991 तक कई कारणोंवश पंचायती राज व्यवस्था कारगर तरीके से कार्य नहीं कर पाई। साथ ही, जहाँ कहीं पंचायतों के चुनाव हुए उनमें गाँवों के सम्भ्रांतजनों की भूमिका ही महत्त्वपूर्ण रही। आम आदमी और महिलाएँ इस प्रक्रिया से कोसों दूर रहे। 1992–1993 में 73वां और 74वां संविधान संशोधन पारित हुआ, जो कि पंचायती राज व्यवस्था के इतिहास में मील का पत्थर साबित हुआ। इन दोनों संशोधनों के माध्यम से पचांयतों एवं नगरीय निकायों को संवैधानिक दर्जा प्राप्त हुआ तथा सदियों से हाशिए पर रही महिलाओं के लिए आरक्षण का प्रावधान किया गया।

पंचायती राज संस्थाओं मे महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान महिला सशक्तिकरण तथा निर्णय प्रक्रिया में उनकी सहभागिता में वृद्धि की दिशा में एक क्रान्तिकारी कदम है। राजनीतिक क्षेत्र में जमीनी स्तर से प्रारम्भ हुई महिलाओं की सहभागिता के फलस्वरूप एक नई राजनीतिक संस्कृति विकसित हुई है।

पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से उभरते हुए महिला नेतृत्व को लेकर कहा जा रहा है कि भारत में एक मौन लोकतांत्रिक क्रान्ति हो रही है जो अभी राष्ट्रीय स्तर पर भले हीन दिखे, किन्तु इसकी धीमी आंच भारतीय लोकतन्त्र को मजबूत बना रही है। इतना ही नहीं यह क्रान्ति देश के सत्ता विमर्श के ढांचे में भी बदलाव ला रही है। इन निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों में दलित, आदिवासी, पिछड़ी जाति की तथा मुस्लिम महिलाएँ भी हैं। इन महिलाओं ने सत्ता के जातीय समीरकरण को ही नहीं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक समीकरण को भी बदल दिया है। पंचायत स्तर पर इतनी संख्या में महिलाओं की भागीदारी ने स्थानीय स्तर पर सामुदायिक जीवन और उसकी चेतना तथा संस्कृति में भी बदलाव लाया है।

पंचायतों और शहरी स्थानीय निकायों में महिला आरक्षण

वर्ष 1985 में कर्नाटक राज्य सरकार ने अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के लिए उप–कोटा के साथ मंडल प्रजा परिषदों में महिलाओं हेतु 25 प्रतिशत आरक्षण लागू किया, ऐसा करने वाला वह पहला राज्य बना, वर्ष 1987 में तत्कालीन संयुक्त आंध्र प्रदेश ने ग्राम पंचायतों में महिलाओं के लये 9 प्रतिशत आरक्षण लागू किया।

वर्ष 1991 में ओडिशा ने पंचायतों में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण लागू किया। वर्ष 1992 के संवैधानिक संशोधन ने इस आरक्षण को राष्ट्रीय मुद्दा बना दिया और अनुसूचित जाति एवं जनजाति की महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत उप–कोटा निर्धारित किया।

73वाँ और 74वाँ संशोधन

वर्ष 1992 में महिलाओं के लिये राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य योजना 1988–2000 की सिफारिशों के बाद, 73वें व 74वें संशोधन अधिनियम (1992) ने पंचायतीराज संस्थाओं और शहरी स्थानीय निकायों में महिलाओं हेतु 1/3 सीटें आरक्षित करना अनिवार्य कर दिया। पंचायत ''स्थानीय सरकार'' होने के नाते एक राज्य का विषय है और भारत के संविधान की सातवीं अनुसूची की राज्य सूची का हिस्सा है। संविधान का अनुच्छेद 243डी प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा पूर्ण की जाने वाली सीटों की कुल संख्या में से महिलाओं के लिये कम से कम 1/3 आरक्षण अनिवार्य करने, पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करता है।

संसद एवं विधानसभाओं में आरक्षण

हमारे प्रारम्भिक प्रयास अर्थात् निम्न स्तर की संस्थाओं में महिलाओं को जिन उद्देश्यों को लेकर आरक्षण दिया गया था वह उद्देश्य पूरा होता दिखाई दे रहा है। अतः अब आवश्यकता उच्च स्तर पर राजनीतिक संस्थाओं में महिलाओं को आरक्षण देने की है। अगर महिलाओं को संसद तथा विधानमण्डलों में आरक्षण प्राप्त होगा तो एक तरफ महिलाएँ चुनाव प्रक्रिया का हिस्सा बनेंगी और दूसरी तरफ राजनीतिक दलों में सक्रिय सहभागिता का अवसर प्राप्त होगा, जिससे महिला सशक्तिकरण की अवधारण मूर्त रूप ग्रहण कर सकेगी। यह आरक्षण उन्हें संकीर्ण व सीमित दायरे से बाहर लाने में मददगार सिद्ध होगा और साथ ही यह भी साबित होगा कि पारिवारिक परिवेश से बाहर की समस्याएँ भी उनकी समसयाएँ हैं। जब संसद और विधानसभाओं में 33 प्रतिशत का आरक्षण देश में लागू होगा तो महिला प्रतिनिधियों के लिए एक नया रास्ता खुलेगा और वे उस रास्ते से आगे बढ़ते हुए संसद और विधानसभाओं तक पहुँगी। उनके पास एक नया अनुभव होगा, जो उन्हें नीतियों के निर्धारण में मिलेगा।

महिलाओं के लिए आरक्षण का प्रश्न आजादी के बाद से ही उठना शुरू हो गया था लेकिन उस समय इसे गंभीरता से नहीं लिया गया। सन् 1975 से इन प्रश्नों को सीधे–सीधे जनप्रतिनिधित्व से जोड़ दिया गया। फिर समय–समय पर विभिन्न राष्ट्रीय मंचों से इस पर चिंता व्यक्त की जाती रही कि संसद तथा राज्यों की

विधानसभाओं में महिलाओं का प्रतिनिधित्व उनकी जनसंख्या के अनुपात से बहुत कम है। संसद व राज्य विधानमण्डलों में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण देने के लिए सन् 1996 में पहली बार एक विधेयक तैयार किया गया, जो 81वें संविधान संशोधन के नाम से जाना जाता है। उस समय कुछ राजनीतिक दलों के विरोध के चलते यह महत्त्वपूर्ण विधेयक पारित नहीं हुआ। तत्पश्चात् लोकसभा अध्यक्ष एवं राज्यसभा के सभापति दोनों ने आपसी सलाह से दोनों सदनों की 30 सदस्यीय एक संयुक्त समिति का गठन किया। इस समिति ने दिसम्बर 1996 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की और रिपोर्ट के सुझावों को अधिनियम में सम्मिलित कर पुनः इसे वर्ष 1998, 1999—2002, 2008 तथा 2010 में प्रस्तुत किया गया किन्तु राजनीतिक दलों के अडियल रूख व अपने—अपने निहित स्वार्थों के कारण यह पारित न हो सका। डॉ0 मनमोहन सिंह की दूसरी पारी की यूपीए सरकार ने अपने 100 दिनों का जो एजेंडा राष्ट्रपति के अभिभाषण के माध्यम से प्रस्तुत किया, उसमें अब तक सर्वाधिक विवादग्रस्त परन्तु बहुप्रतीक्षित महिला आरक्षण विधेयक की बात भी शामिल थी। संविधान के 108वें संशोधन विधेयक को 8 मार्च, जोकि अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस के रूप में मनाया जाता है, के दिन राज्यसभा में प्रस्तुत होना था, किन्तु विपक्ष के तीखे विरोध के कारण यह संभव न हो सका। समाजवादी पार्टी, राष्ट्रीय जनता दल और जनता दल (यूनाईटेड) न सिर्फ इसके खिलाफ दृढ़प्रतिज्ञ थे बल्कि उन्होंने इसका विरोध भी किया। एक सदस्य ने तो राज्यसभा के सभापति **हामिद अंसारी** के हाथ से बिल की प्रति छीन ली और उसे फाड़ दिया। जो बात आपत्तिजनक है, वह विरोध नहीं है बल्कि वह तरीका जिससे विरोध किया गया। लोकतन्त्र का अर्थ ही यह है कि गरिमा के साथ बहुमत की राय को स्वीकार किया जाए। इस बिल के पक्ष और विपक्ष में बहुत से तर्क हो सकते हैं लेकिन अगर बहुसंख्यक लोग इस बात से सहमत हैं कि महिला आरक्षण बिल पास होना चाहिए तो फिर होना चाहिए। यह बिल पुनः 9 मार्च को राज्यसभा में प्रस्तुत किया गया और महिला आरक्षण बिल को 186 सदस्यों के भारी समर्थन से पारित करके हमारी संसद के ऊपरी सदन ने मंगलवार 9 मार्च 2010 को ऐतिहासिक तारीख बना दिया लेकिन लोकसभा में 262 सीटें होने के बावजूद भी मनमोहन सिंह सरकारी विधेयक को पारित नहीं करा पाई। मोदी सरकार 19 सितम्बर, 2023 को संविधान (एक सो अट्ठाईसवां संशोधन) विधेयक 2023 (106वाँ संविधान संशोधन) अधिनियम 2023 को लोकसभा में पेश किया। विधेयक को 20 सितम्बर को लोकसभा तथा 21 सितम्बर को राज्यसभा में पारित किया गया। महिला आरक्षण विधेयक यानी नारी शक्ति वंदन अधिनियम को राष्ट्रपति (द्रौपदी मुर्मू) से शुक्रवार 29 सितम्बर 2023 को मंजूरी मिल गई। वर्ष 1996 में प्रस्ताविक इस विधेयक की 27 वर्षों की लम्बी यात्रा में पहली बार रोशनी प्रदान की है। महत्त्वपूर्ण सिफ़ यह नहीं कि विधेयक को लोकसभा एवं राज्यसभा ने पारित कर दिया, महत्वपूर्ण यह है कि इसके विरोध में काफी समय से कायम घेराबंदी टूटी और सदन ने महिलाओं के राजनीतिक अधिकार के पक्ष में राष्ट्रीय भावना को स्वीकार व व्यक्त किया, जो 200 वर्षों में अमेरिका का लोकतन्त्र नहीं कर पाया, उसे भारतीय लोकतंत्र ने महल 76 वर्षों में हासिल कर दिखाया। जहाँ एक ओर मण्डल आयोग ने जातीय दायरों को तोड़ा वहीं दूसरी ओर महिला आरक्षण विधेयक लैंगिक विषमता को खत्म करने का रास्ता खोलेगा। यह सब कुछ शक्ति के नए आयामों को जन्म देगा।

डेनमार्क के **आर्हुस विश्वविद्यालय** में राजनीति विज्ञान संस्थान की **विदुषी डूड डल्हर अप** ने ''**राजनीति में महिलाओं**'' विषय पर गहन शोध किया है। उनका कहना है– ''जब तक राजनीति में गिनी–चुनी महिलाएँ रहेंगी, तब तक कोई खास असर पड़ने वाला नहीं है। पर्याप्त संख्या में महिलाओं के राजनीति में आने के बाद ही इस क्षेत्र में मूलभूत परिवर्तन हो सकता है।''[11]

संसद एवं विधानसभाओं में महिलाओं की सहभागिता–

भारतीय लोकतान्त्रिक व्यवस्था में महिलाओं की उपस्थिति प्रारम्भ से ही न्यून रही है। अब तक भारत में सम्पन्न 18 आम चुनावों तथा विधानसभाओं के चुनावों पर यदि दृष्टि डालें तो स्पष्ट होता है कि महिलाओं का प्रतिनिधित्व अति न्यून रहा है। इसके अतिरिक्त राजनीतिक दलों व सत्ता के दूसरे महत्त्वपूर्ण केन्द्रों में भी महिलाओं को बहुत ही कम प्रतिनिधित्व मिला है।

लोकसभा			राज्यसभा	
वर्ष	कुल सीटें	महिला सांसद	कुल सीटें	महिला सांसद
1952	489	22	219	16
1957	494	27	237	18
1962	494	34	238	18
1967	520	31	240	20
1971	520	22	243	17
1977	542	19	244	25
1980	542	28	244	24
1984	542	44	244	24
1989	529	27	245	24
1991	521	39	245	38
1996	543	39	223	19
1998	543	43	245	15
1999	543	49	245	19

2004	543	44	245	क्छ ।
2009	543	59	245	22
2014	530	35	240	21
2019	543	78	231	27
2024	543	74	224	24

विभिन्न राज्यों में महिला आरक्षण की स्थिति–

सितम्बर 2021 तक कम से कम 18 राज्यों में पंचायती राज संस्थानों में महिला निर्वाचित प्रतिनिधियों का प्रतिशत 50 प्रतिशत से अधिक था। ये राज्य निम्न प्रकार हैं– उत्तराखण्ड, छत्तीसगढ़, असम, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, ओडिया, केरल, बिहार, झारखंड, पश्चिम बंगाल, राजस्थान, मणिपुर, तेलंगाना, सिक्किम, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश और मध्य प्रदेश।

गुजरात और केरल सहित इन 18 राज्यों ने पंचायती राज संस्थानों में महिलाओं के लिये 50 प्रतिशत आरक्षण हेतु कानूनी प्रावधान भी किये हैं। पंचायती राज संस्थानों में महिला प्रतिनिधियों का उच्चतम अनुपात उत्तराखण्ड–56.02 प्रतिशत, न्यूनतम उत्तर प्रदेश 33.34 प्रतिशत, भारत में कुल प्रतिशत 45.61 प्रतिशत है। वर्ष 2006 में बिहार 50 प्रतिशत (पंचायतों और न्स्ठ में) आरक्षण बढ़ाने वाला पहला राज्य था, उसके बाद अगले वर्ष सिक्किम ने आरक्षण बढ़ाया।

विभिन्न राज्यों की विधानसभाओं में महिलाओं का प्रतिनिधित्व (प्रतिशत)[12]

क्रम सं0	राज्य का नाम	महिलाओं का प्रतिनिधित्व
1.	छत्तीसगढ़	14%
2.	पश्चिम बंगाल	13.7%
3.	उत्तर प्रदेश, बिहार, दिल्ली, हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, उत्तराखण्ड	10-12%
4.	झारखण्ड	12.4%

5.	आन्ध्र प्रदेश, असम, गोवा, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, केरल, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, मणिपुर, त्रिपुरा, मेघालय, महाराष्ट्र, ओडिशा, सिक्किम, तेलंगाना, तमिलनाडु	10% से कम

विभिन्न देशों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व (प्रतिशत)[13]

क्रम सं0	देश का नाम	महिलाओं का प्रतिनिधित्व	क्रम सं0	देश का नाम	महिलाओं का प्रतिनिधित्व
1.	दक्षिण अफ्रीका	46%	6.	पाकिस्तान	20%
2.	ब्रिटेन	35%	7.	ब्राजील	18%
3.	अमेरिका	29%	8.	जापान	10%
4.	चीन	25%	9.	श्रीलंका	05%
5.	बांग्लादेश	21%			

महिला आरक्षण और राजनीति

महिलाओं को संसद और विधानसभाओं में एक–तिहाई आरक्षण देने के मसले पर तमाम महत्वपूर्ण राजनीतिक दलों की अपनी–अपनी राय दी है। विपक्ष महिला आरक्षण के मुद्दे को लेकर कई धाराओं और उपधाराओं में बंटा हुआ है। विरोधी दल विभिन्न मंचों से **डॉ0 राममनोहर लोहिया** का नाम लेते हुए इस विधेयक का विरोध कर रहे हैं, लेकिन महिलाओं को लेकर लोहिया की दृष्टि बहुत भिन्न थी। लोहिया ने जिन तबको को पिछड़ा वर्ग माना था, उनमें अनुसूचित जाति, जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यक और महिलाएँ शामिल थीं। लोहिया मानते थे कि महिलाएँ किसी भी जाति की क्यों न हों, वे हमारी सामाजिक संरचना के आधार पर पुरूषों की तुलना में पिछड़ी हैं। महारानी हो या मेहतरानी सब औरतों की कहानी एक जैसी है। **बादेर सईद** कहती हैं कि ''मुस्लिम महिलाओं के लिए कोटा हो या नहीं, यह सवाल इंतजार कर सकता है लेकिन पहले यह तय होना चाहिए कि महिलाओं को उनका हिस्सा मिले''[14] **राजेन्द्र सच्चर** का मानना है कि ''महिलाओं को वर्गों में बाँटने का कोई औचित्य नहीं है।''[15]

महिला आरक्षण का विरोध कर रहे दलों का तर्क यह भी है कि आरक्षण लागू करने का दायित्व राजनीतिक दलों को सौपा जाए। यह तर्क भी मजबूत है लेकिन विचारणीय मुद्दा यह है कि ये दल किसका इन्तजार कर रहे हैं? अपने दल के संगठन में महिलाओं को महत्वपूर्ण जिम्मेदारियाँ और उच्च पद क्यों नहीं सौंपते, क्यों

निर्णय–निर्माण में उनकी भूमिका नहीं बढ़ाते? अधिक महिलाओं को उम्मीदवार क्यों नहीं बनाते? यदि सभी दल अपने संगठनों में महिलाओं की सहभागिता बढ़ाते तो आज यह बहस बेमतलब होती और बिना आरक्षण के ही राजनीतिक व्यवस्था में महिलाओं की सहभागिता अच्छी खासी होती।

निम्न स्तर की संस्थाओं में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत (कुछ राज्यों में 50 प्रतिशत) आरक्षण की व्यवस्था है। निश्चित रूप से ये महिलाएँ अनुभवों के साथ आगे बढ़ रही हैं और आने वाले समय में ये महिलाएँ अपने अनुभव के दम पर आगे आएँगी। साथ ही इस विधेयक का प्रभाव क्षेत्र के विकास कार्यों पर भी पड़ेगा।

भारतीय नारी गौरवपूर्ण अतीत के साथ–साथ मानव विकास का एक उज्जवल आयाम रही है। ''अहं राष्ट्री संगमनी वसूना'' तथा ''अहं स्ट्राल धनुरातनोमि'' आदि ऋचाओं में वह कहती है– मैं राष्ट्र को बाँधने वाली शक्ति हूँ। मैं ही उसे ऐश्वर्य से सम्पन्न करती हूँ। मैं ही ब्रह्माद्वेषियों के संहार के लिए रूद्र का धनुष चढ़ाती हूँ। मैं ही आकाश और पृथ्वी में व्याप्त होकर मनुष्य के लिए संग्राम करती हूँ। स्पष्टतः वाग्देवी के इस रूप में महासरस्वती, महालक्ष्मी तथा महाचंडी की विविध शक्तियों का समाहार है।

निष्कर्ष–

वास्तव में, यह एक दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है कि बीते 77 वर्षों से भारतीय राजनीति और शासन व्यवस्था में आधी आबादी को दूर रखा गया है, लेकिन अब हमें महिलाओं के समान प्रतिनिधित्व के लक्ष्य को हासिल करने के लिए अधिक समावेशी प्रक्रियाओं को अपनाना होगा। लोकतांत्रिक प्रक्रिया को बढ़ावा देने तथा अन्याय और दमन के खिलाफ संघर्ष के लिए निर्णय–निर्माण प्रक्रिया में महिलाओं की उपस्थिति अनिवार्य है। यह सर्वविदित है कि हमारी राजनीतिक व्यवस्था में दो–तीन महिलाओं को छोड़कर शेष का दामन साफ रहा है। इससे यह आशा की जा सकती है कि जब निर्णय करने वाले निकायों में एक–तिहाई महिलाएँ होंगी तो भ्रष्टाचार, आपराधिक प्रवृत्ति व अन्य तरह की बुराइयों पर रोक लगेगी। अतः महिला आरक्षण आज समय की माँग है, इसे और अधिक लम्बे समय तक टाला नहीं जा सकता। महिला आरक्षण विधेयक अपने वर्तमान स्वरूप में पारित हो गया है तो उसे जल्द ही लागू करना चाहिए। यदि महिलाओं को जाति, धर्म, शहरी और ग्रामीण क्षेत्र के आधार पर संसद में बैठाया गया तो हमारी संसद भारत की जनता का नहीं वरन् विभिन्न जातियों, धर्मो, क्षेत्रों और वर्गो का प्रतिनिधित्व करेगी। महिलाओं को आरक्षण इसलिए नहीं दिया जा रहा कि वे महिलाएँ हैं या पुरूषों से अलग हैं। वरन् यह आरक्षण इसलिए दिया जा रहा है कि उन्हें पुरूषों के बराबर लाना है और अवसरों की प्राथमिकता देना है। इस प्रक्रिया में हम यदि जाति या धर्म को लाने की कोशिश करेंगे तो जोड़ने की प्रक्रिया तोड़ने की प्रक्रिया बन जायेगी। वास्तव में, यदि महिलाओं को वर्ग के तौर पर हम अन्यायग्रस्त मानते हैं तो उन सबको हमें एक ही श्रेणी में मानना पड़ेगा तथा समानता की दिशा में यह एक मजबूत कदम है।

सन्दर्भ सूची

1. शर्मा, डॉ0 नीरजा (2013) महिला सशक्तिकरण, आस्था प्रकाशन, जयपुर, पृ0सं0 89
2. सिंह, डॉ0 नरेन्द्र (2015) मानवाधिकार एवं महिला सहभागिता, राहुल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ, पृ0सं0 45
3. सोलंकी, डॉ0 रानी प्रभा (2019) भारतीय महिलाएँ सशक्तिकरण एवं महिला सहकारिता, के0के0 पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पृ0सं0 95
4. माथुर, डॉ0 सावित्री (2014) महिलाएँ एवं मानवाधिकार, आस्था प्रकाशन, जयपुर, पृ0सं0 142
5. खालखो, डॉ0 रेशमा (2006) जनजातीय महिलाएः सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतियाँ एवं पर्यावरण के संदर्भ में, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, पृ0सं0 182
6. नाटाणी, शोभा (2010) भारतीय समाज और नारी (दशा एवं दिशा), मार्क पब्लिशर्स, जयपुर, पृ0सं0 15
7. वर्मा, सवलिया बिहारी (2005) महिला जागृति और सशक्तिकरण, आविष्कार पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर, पृ0सं0 37
8. बत्रा, उर्मिला (2012) महिला साक्षरता एवं सामाजिक परिवर्तन, मार्क पब्लिशर्स, जयपुर, पृ0सं0 136
9. राय, राजेश्वर (2013) पंचायती राज एवं महिला नेतृत्व, इशिका पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, पृ0सं0 127
10. गढवी, डॉ0 नयनेश (2013) 21वीं सदी में महिलाओं का बदलता स्वरूप, पैराडाइज पब्लिशर्स, जयपुर, पृ0सं0 126
11. जाखड़, डॉ0 राजेन्द्र, महिला सशक्तिकरणः विविध आयाम] IJR, Vol. 10, Issue-05, May 2021 पृ0सं0 06
12. जनसत्ता, दिल्ली, 15 अप्रैल 2023, पृ0सं0 05
13. राष्ट्रीय दैनिक जागरण, दिल्ली, 20 अप्रैल 2023, पृ0सं0 06
14. गुप्ता, रोहित कुमार (2011) पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं की दशा और दिशा, नवराज प्रकाशन, भजनपुर, पृ0सं0 162
15. गुप्ता, कमलेश कुमार (2005) भारतीय महिलाएँ शोषण, उत्पीड़न एवं अधिकार, बुक एनक्लेव, जयपुर, पृ0सं0 205